१०. षट्खंडागमका परिचय

पुष्पन्दत और भूतबलिद्वारा जो ग्रंथ रचा गया उसका नाम क्या था ? स्वयं सूत्रोंमें तो ग्रंथका कोई नाम हमारे देखनेमें नहीं आया, किंतु धवलाकारने ग्रंथकी उत्थानिकामें ग्रंथके मंगल, निमित्त, हेतु, परिमाण, **ग्रंथ नाम** नाम और कर्ता, इन छह ज्ञातव्य बातोंका परिचय कराया है। वहां इसे '**खंडसिध्दान्त**' कहा है और इसके खंडोंकी संख्या छह बतलाई है (१ तदो एयं **खंडसिध्दंतं** पडुच्च भूदबलि-पुप्फयंताइरिया वि कत्तारो उच्चंति। (पृ. ७१) इदं पुण **जीवट्ठाणं खंडसिध्दंतं** पहुच्च पुव्वाणुपुव्वीए ट्ठिदं छण्हं खंडाणं पढमखंडं जीवट्ठाणमिदि। पृ.७४)। इस प्रकार धवलाकारने इस ग्रंथका नाम **'षट्खंड सिध्दान्त'** प्रगट किया है। उन्होंने यह भी कहा है कि सिध्दान्त और आगम एकार्थवाची हैं (२ आगमो सिध्दंतो पवयणमिदि एयट्ठो। (पृ. २०.) आगमः सिध्दान्तः। (पृ. २९.) कृतान्तागम-सिध्दान्त-ग्रंथाः शास्त्रमतः परम्।। (धनंजय-नाममाला ४))। धवलाकारके पश्चात् इन ग्रंथोंकी प्रसिध्दि आगम परमागम व षट्खंडागम नामसे ही विशेषतः हुई। अपभ्रंश महापुराणके कर्ता पुष्पदन्तने धवल और जयधवलको **आगम सिध्दान्त (३** ण उ बुज्झिउ **आयमु** सद्दधामु। सिद्धंतु धवलु जयधवलु णाम।। (महापु.१,९,८.) **),** गोम्मटसारके टीकाकारने **परमागम** (४ एवं विंशतिसंख्या गुणस्थानादयः प्ररुपणाः भगवदर्हद्गणधरशिष्य-प्रशिष्यादिगुरुपर्वागतया परिपाटया अनुक्रमेण भणिताः **परमागमे** पूर्वाचार्यैः प्रतिपादिताः (गो. जी. टी. २१.) परमागमे निगोदजीवानां द्वैविध्यस्य सुप्रसिध्दत्वात्। (गो. जी. टी. ४४२.)) तथा श्रुतावतारके कर्ता इन्द्रनन्दिने **षट्खंडागम** (५ **षट्खंडागमरचना**भिप्रायं पुष्पदन्तगुरोः।।१३७।। **षट्खंडाग**मरचनां प्रविघाय भूतबल्यार्यः।।१३८।। **षट्खंडाग**मपुस्तकमहो मया चिंतितं कार्यम्।।१४६।। एवं **षट्खंडाग**मसूत्रोत्पतिं प्ररुप्य पुनरधुना।।१४९।। षट्खंडागमगत-खंड-पंचकस्य पुनः।।१६८।। इन्द्र. श्रुतावतार.) कहा है, और इन ग्रंथोंको आगम कहनेकी बडी भारी सार्थकता भी है। सिध्दान्त और आगम यद्यपि साधारणतः पर्यायवाची गिने जाते हैं, किंतु निरुक्ति और सूक्ष्मार्थकी दृष्टिसे उनमें भेद है। कोई भी निश्चित या सिध्द मत सिध्दान्त कहा जा सकता हैं, किंतु आगम वही सिद्धान्त कहलाता है जो आप्तवाक्य है और पूर्व-परम्परासे आया है (६ राध्द-सिध्द-कृतेभ्योऽन्त **आप्तोक्तिः समयागमौ** (हैम. २, १५६.) पूर्वापरविरुध्दादेर्व्यपेतो दोषसंहतेः। द्योतकः सर्वभावनामाप्तव्याहृतिरागमः। (धवला अ. ७१६))। इस प्रकार सभी आगमको सिध्दान्त कह सकते है किंतु सभी सिध्दान्त आगम नहीं कहला सकते। सिध्दान्त सामान्य संज्ञा है और आगम विशेष।

इस विवेचनके अनुसार प्रस्तुत ग्रंथ पूर्णरुपसे **आगम सिध्दान्त** ही है। धरसेनाचार्यने पुष्पदन्त और भूतबलिको वे ही सिध्दान्त सिखाये जो उन्हे उनसे **पूर्ववर्ती आचार्योंद्वारा** प्राप्त हुए और जिनकी परंपरा महावीरस्वामीतक पहुँचती हैं। पुष्पदन्त और भूतबलिने भी उन्हीं आगम सिध्दान्तोंको पुस्तकारुढ किया और टीकाकारने भी उनका विवेचन पूर्व मान्यताओं और पूर्व आचार्योंके उपदेशोंके अनुसार ही किया है जैसा कि उनकी टीकामें स्थान स्थानपर प्रकट है(१ 'भूयसामाचार्याणामुपदेशाद्वा तदवगतेः ' (१९७) 'किमित्यागमे तत्र तस्य सत्त्वं नोक्तमिति चेन्न, आगमस्यातर्कगोचरत्वात्' (२०६) '**जिणा ण अण्णहावाइणो**' (२२१) '**आइरियपरंपराए** णिरंतरमागयाणं आइरिएहि पोत्थेसु चढावियाणं असुत्तत्तणविरोहादो' (२२१) 'प्रतिपादकार्षोपलंभात्' (२२९) '**आर्षात्तदगवतेः** ' (२५८) 'प्रवाहरुपेणापोरुषेयत्वतस्तीर्थकृदादयोऽस्य व्याख्यातार एव न कर्तारः ' (३४९))। आगमकी यह भी विशेषता है कि उसमें हेतुवाद नहीं चलता(२ 'किमित्यागमे तत्र तस्य तत्वं नोक्तमिति चेन्न, **आगमस्यातर्कगोचरत्वात्** (२०६)), क्योंकि, आगम अनुमान आदिकी अपेक्षा नहीं रखता किंतु स्वयं प्रत्यक्षके बराबरका प्रमाण माना जाता है(३ सुदकेवल च णाणं दोण्णि वि सरिमाणि होंति बोहादो। सुदणाणं तु परोक्खं पचक्खं केवल णाणं।। (गो. जी. ३६९.))।

पुष्पदन्त व भूतबलिकी रचना तथा उस पर वीरसेनकी टीका इसी पूर्व परम्पराकी मर्यादाको लिये हुए है इसीलिये इन्द्रनन्दिने उसे आगम कहा है और हमने भी इसी सार्थकताको मान देकर इन्द्रनन्दिद्वारा निर्दिष्ट नाम **षट्खंडागम** स्वीकार किया है।

षट्खंडोंमें प्रथम खंडका नाम '**जीवट्ठाण**' है। उसके अन्तर्गत १ सत्, २ संख्या, ३ क्षेत्र, ४ स्पर्शन, ५ काल, ६ अन्तर, ७ भाव और ८ अल्पबहुत्व, ये आठ अनुयोगद्वार, तथा १ प्रकृति समुत्कीर्तना, २ **जीवट्ठाण** स्थानसमुत्कीर्तना, ३-५ तीन महादण्डक, ६ जघन्य स्थिति, ७ उत्कृष्ट स्थिति, ८ सम्यक्त्वोत्पत्ति और ९ गति-आगति ये नौ चूलिकाएं है।

इस खंडका परिमाण धवलाकारने **अठारह हजार पद** कहा है (पृ. ६०)। पूर्वोक्त आठ अनुयोगद्वार और नौ चूलिकाओंमें गुणस्थान और मार्गणाओंका आश्रय लेकर यहां विस्तारसे वर्णन किया गया है।

दूसरा खंड **खुद्दाबंध** (क्षुल्लकबंध) है। इसके ग्यारह अधिकार हैं, १ स्वामित्व, २ काल, ३ अन्तर, ४ **२ खुद्दाबंध** भंगविचय, ५ द्रव्यप्रमाणानुगम, ६ क्षेत्रानुगम, ७ स्पर्शनानुगम, ८ नाना-जीव-काल, ९ नाना-. जीव-अन्तर, १० भागाभागानुगम और ११ अल्पबहुत्वानुगम। इस खंडमें इन ग्यारह प्ररुपणाओंद्वारा कर्मबन्ध करनेवाले जीवका कर्मबन्धके भेदोंसहित वर्णन किया गया है।

यह खंड अ. प्रतिके ४७५ पत्रसे प्रारम्भ होकर ५७६ पत्रपर समाप्त हुआ है।

तीसरे खंडका नाम **बंधस्वामित्वविचय** है। कितनी प्रकृतियोंका किस जीवके कहां तक बंध होता हैं, **३ बंधस्वामित्व-विचय** किसके नहीं होता हैं, कितनी प्रकृतियोंकी किस गुणस्थानमें व्युच्छित्ति होती हैं, . स्वोदय बंधरुप प्रकृतियां कितनी हैं और परोदय बंधरुप कितनी हैं, इत्यादि कर्मबंधसंबन्धी विषयोंका बंधक जीवकी अपेक्षासे इस खंडमें वर्णन है।

यह खंड अ. प्रतिके ५७६ वें पत्रसे प्रारम्भ होकर ६६७ वें पत्र पर समाप्त हुआ है। चौथे खंडका नाम **वेदना** है। इसके आदिमें पुनः मंगलाचरण किया गया है। इसी खंडके अन्तर्गत **कृति** और **वेदना** **४ वेदना** अनुयोगद्वार हैं। किंतु वेदनाके कथनकी प्रधानता और अधिक विस्तारके कारण इस खंडका . नाम वेदना रक्खा गया हैं(१ कदि पास-कम्म-पयडि-अणियोगद्दाराणि वि एत्थ परुविदाणि, तेसिं खंडगंथसण्णमकाऊण तिण्णि चेव खंडाणि त्ति किमट्ठं उच्चदे ? ण, तेसिं **पहाणत्ताभावादो**। तं पि कुदो णव्वदे ? **संखेवेण परुवणादो।**)।

कृतिमें औदारिकादि पांच शरीरोंकी संघातन और परिशातनरुप कृतिका तथा भवके प्रथम और अप्रथम समयमें स्थित जीवोंके कृति, नोकृति और अवक्तव्यरुप संख्याओंका वर्णन है। १ नाम, २ स्थापना, ३ द्रव्य, ४ गणना, ५ ग्रंथ, ६ कारण और ७ भाव, ये कृतिके सात प्रकार हैं, जिनमेंसे प्रकृतमें गणनाकृति मुख्य बतलाई गई हैं।

वेदनामें १ निक्षेप, २ नय, ३ नाम, ४ द्रव्य, ५ क्षेत्र, ६ काल, ७ भाव, ८ प्रत्यय, ९ स्वामित्व, १० वेदना, ११ गति, १२ अनन्तर, १३ सन्निकर्ष, १४ परिमाण, १५ भागा-भागानुगम और १६ अल्पबहुत्वानुगम, इन सोलह अधिकारोंके द्वारा वेदनाका वर्णन है।

इस खंडका परिमाण **सोलह हजार पद** बतलाया गया हैं। यह समस्त खंड अ. प्रतिके ६६७ वें पत्रसे प्रारम्भ होकर ११०६ वें पत्रपर समाप्त हुआ है, जहां कहा गया हैं--

एवं वेयण-अप्पाबहुगाणिओगद्दारे समत्ते वेयणाखंडं समत्ता (खंडो समत्तो)।

पांचवें खंडका नाम **वर्गणा** हैं। इसी खंडमें बधनीयके अन्तर्गत वर्गणा अधिकारके अतिरिक्त स्पर्श, **५ वर्गणा** कर्म, प्रकृति और बन्धनका पहला भेद बंध, इन अनुयोगद्वारोंका भी अन्तर्भाव कर लिया गया है।

स्पर्शमें निक्षेप, नय आदि सोलह अधिकारोंद्वारा तेरह प्रकारके स्पर्शोका वर्णन करके प्रकृतमें कर्म-स्पर्शसे प्रयोजन बतलाया है।

कर्ममें पूर्वोक्त सोलह अधिकारोंद्वारा १ नाम, २ स्थापना, ३ द्रव्य, ४ प्रयोग, ५ समवधान, ६ अधः, ७ ईर्यापथ, ८ तप, ९ क्रिया और १० भाव, इन दश प्रकारके कर्मोंका वर्णन है।

प्रकृतिमें शील और स्वभावको प्रकृतिके पर्यायवाची बताकर उसके नाम, स्थापना, द्रव्य और भाव, इन चार भेदोंमेंसे कर्म-द्रव्य-प्रकृतिका पूर्वोक्त १६ अधिकारोंद्वारा विस्तारसे वर्णन किया गया हैं।

इस खंडका प्रधान अधिकार बंधनीय हैं, जिसमें २३ प्रकारकी वर्गणाओंका वर्णन और उनमेंसे कर्मबन्धके योग्य वर्गणाओंका विस्तारसे कथन किया है।

यह खंड अ. प्रतिके ११०६ वें पत्रसे प्रारम्भ होकर १३३२ वें पत्रपर समाप्त हुआ हैं और वहां कहा हैं--

एवं विस्ससोवचय-परुवणाए समत्ताए **बाहिरिय-वग्गणा** समत्ता होदि।

इन्द्रनन्दिने श्रुतावतारमें कहा हैं कि भूतबलिने पांच खंडोंके पुष्पदन्त विरचित सूत्रोंसहित छह हजार

६ महाबंध सूत्र रचनेके पश्चात् **महाबंध** नामके छठवें खंडकी तीस हजार श्लोक प्रमाण रचना की(१ . तेन ततः परिपठितां **भूतबलिः** सत्प्ररुपणां श्रुत्वा। षट्खंडागमरचनाभिप्रायं पुष्पदन्तगुरोः।।१३७ विज्ञायाल्पायुष्यानल्पमतीन्मानवान् प्रतीत्य ततः। द्रव्यप्ररुपणाद्यधिकारः **खंडपंचक**स्यान्वक्।।१३८ सूत्राणि षट्सहस्त्रग्रंथान्यथ पूर्वसूत्रसहितानि। प्रविरच्य **महाबंधाव्हयं ततः षष्ठकं खंडम्।।१३९** त्रिंशत्सहस्त्रसूत्रग्रंथं व्यरचयदसौ महात्मा। इन्द्र, श्रुतावतार.)।

धवलामें जहां वर्गणाखंड समाप्त हुआ हैं वहां सूचना की गई हैं कि-

'जं तं बंधविहाणं तं चउव्विहं, पयडिबंधो ट्ठिदिबंधो अनुभागबंधो पदेसबंधो चेदि। एदेसि चदुण्हं बंधाणं विहाणं भूदबलि-भडारएण **महाबंधे** सप्पवंचेण लिहिदं ति अम्हेहि एत्थ ण लिहिदं। तदो सयले महाबंधे एत्थ परुविदे बंधविहाणं समप्पदि'। (धवला. क. १२५९-१२६०)

अर्थात् बंधविधान चार प्रकारका है-प्रकृतिबंध, स्थितिबंध, अनुभागबंध और प्रदेशबंध। इन चारों प्रकारके बंधोंका विधान भूतबलि भट्टारकने महाबंधमें सविस्तररुपसे लिखा हैं, इस कारण हमने (वीरसेनाचार्यने) उसे यहां नहीं लिखा। इस प्रकारसे समस्त महाबंधके यहां प्ररुपण हो जानेपर बंधविधान समाप्त होता है।

ऐसा ही एक उल्लेख जयधवलामें भी पाया जाता हैं जहां कहा गया हैं कि, प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश बंधका वर्णन विस्तारसे **महाबंध**में प्ररुपित हैं और उसे वहांसे देख लेना चाहिये, क्योंकि, जो बात प्रकाशित हो चुकी हैं उसे पुनः प्रकाशित करनेमें कोई फल नहीं। यथा--

सो पुण पयडिट्ठिदिअणुभागपदेसबंधो **बहुसो परुविदो** (चूर्णिसूत्र)। सो उण गाहाए पुव्वद्धम्मि णिलीणो पयडि-ट्ठिदि-अणुभाग-पदेस-विसओ बंधो बहुसो गंथंतरेसु परुविदो त्ति तत्थेव वित्थरो दट्ठव्वो, ण एत्थ पुणे परुविज्जदे, पयासियपयासणे फलविसेसाणुवलंभादो। तदो **महाबंधाणुसारेणेत्थ** पयडि-ट्ठिद-अणुभाग-पदेसबंधेसु **विहासिय**समत्तेसु तदो बंधो समत्तो होई। जयध. अ. ५४८

इससे इन्द्रनन्दिके कथन की पुष्टि होती हैं कि छठवां खंड स्वयं भूतबलि आचार्यद्वारा रचित सविस्तर पुस्तकारुढ है।

किंतु इन्द्रनन्दिने श्रुतावतारमें आगे चलकर कहा है कि वीरसेनाचार्यने एलाचार्यसे सिद्धान्त सीखनेके

सत्कर्म-पाहुड अनन्तर निबन्धनादि अठारह अधिकारोंद्वारा **सत्कर्म** नामक छठवें खंडका संक्षेपसे विधान . किया और इस प्रकार छहों खंडोंकी बहत्तर हजार ग्रंथप्रमाण धवला टीका रची गई। (देखो ऊपर पृ. ३८)

धवलामें वर्गणाखंडकी समाप्ति तथा उपर्युक्त भूतबलिकृत महाबंधकी सूचनाके पश्चात् निबंधन, प्रक्रम, उपक्रम, उदय, मोक्ष, संक्रम, लेश्या, लेश्याकर्म, लेश्यापरिणाम सातासात, दीर्घ-ह्रस्व, भवधारणीय, पुद्गलात्म, निधत्त-अनिधत्त निकाचित-अनिकाचित कर्मस्थिति, पश्चिमस्कंध और अल्पबहुत्व, इन अठारह अनुयोगव्दारोंका कथन किया गया हैं और इस समस्त भागको चूलिका कहा हैं। यथा--

एत्तो उवरिम-गंथो **चूलिया** णाम।

इन्द्रनन्दिके उपर्युक्त कथनानुसार यही चूलिका संक्षेपसे छठवां खंड ठहरता हैं, और इसका नाम **सत्कर्म** प्रतीत होता हैं, तथा इसके सहित धवला षट्खंडागम ७२ हजार श्लोक प्रमाण सिद्ध होता हैं। **विबुध श्रीधरके** मतानुसार वीरसेनकृत ७२ हजार प्रमाण समस्त धवला टीकाका ही नाम सत्कर्म है। यथा---

अत्रान्तरे एलाचार्यभट्टारकपार्श्वे सिन्ध्दातद्वयं वीरसेननामा मुनिः पठित्वाऽपराण्यपि अष्टादशाधिकाराणि प्राप्य पंच-खंडे षट्-खंडे संकल्प्य संस्कृतप्राकृतभाषया **सत्कर्म**नामटीकां द्वासप्ततिसहस्त्रप्रमितां **धवल**नामांकितां लिखाप्य विशंतिसहस्त्रकर्मप्राभृतं विचार्य वीरसेनो मुनिः स्वर्ग यास्यति। (विबुध श्रीधर. श्रुतावतार मा. ग्रं. मा. २१, पृ. ३१८)

दुर्भाग्यतः महाबंध **(महाधवल)** हमें उपलब्ध नहीं हैं, इस कारण महाबंध और सत्कर्म नामोंकी इस उलझनको सुलझाना कठिन प्रतीत होता हैं। किन्तु मूडविद्रीमें सुरक्षित महाधवलका जो थोडासा परिचय उपलब्ध हुआ हैं उससे ज्ञात होता हैं कि वह ग्रंथ भी **सत्कर्म** नामसे हैं और उसपर एक पंचिकारुप विवरण हैं जिसके आदिमें ही कहा गया हैं--

'वोच्छामी **संतकम्मे** पंचियरूवेण विवरणं सुमहत्थ ।------- चोव्वीसमणियोगद्दारेसु तत्थ कदिवेदणा त्ति जाणि अणियोगद्दाराणि **वेदणाखंड**म्हि पुणो फास (कम्म-पयडि-बंधणाणि) चत्तारि अणियोगद्दारेसु तत्थ बंध -बंधणिज्जणामणियोगेहि सह **वग्गणाखंडम्हि,** पुणो बंधविधाणणामाणियोगो (१ यहां पाठमे कुछ त्रुटि जान पडती हैं, क्योंकि, धवलाके अनुसार खुद्दाबंधसें बंधकका वर्णन हैं और बंधविधान महाबंधका विषय हैं.) **खुद्दाबंध**म्हि सप्पवंचेण परू विदाणि । तो वि तस्सइगंभीरत्तादो अत्थ-विसम पदाणमत्थे् थोरूध्दयेण (?) पंचियसरूवेण भणिस्सामो। (वीरवाणी सि भ रिपोर्ट, १९३५)

इसका भावार्थ यह है कि महाकर्मप्रकृति पाहुडके चौवीस अनुयोगव्दारोंमेसें **कृति** और **वेदनाका वेदना** खंडमे, **स्पर्श, कर्म, प्रकृति** और बंधनके **बंध** और **बंधनीय**का वर्गणाखंडमे और **बंधविधान १** (यहा पाठमे कुछ त्रुटि जान पडती है, क्योंकि, धवलाके अनुसार खुद्दाबंधसें बंधकका वर्णन है और बंधविधान महाबंधका विषय है।) नामक अणुयोगव्दारका **खुद्दाबंधमें** विस्तारसे वर्णन किया जा चुका हैं। इनसे शेष अठराह अनुयोगव्दार सब **सत्कर्म**में प्ररूपित किये गये है। तो भी उनके अतिगंभीर होनेसे उसके विषय पदोका अर्थ संक्षे्पमें पंचिकारूपसे यहां कहा जाता हैं।

इससे जान पडा की महाधवलका मूलग्रंथ संतकम्म (सत्कर्म) नामका है और उसमें महाकर्मप्रकृतिपाहुडके चौवीस अनुयोगव्दारोंमेंसें वेदना और वर्गणाखंडमे वर्णित प्रथम छहको छोडकर शेष निबंधनादि अठारह अनुयोगव्दारोंका प्ररूपण है।

महाधवल या सत्कर्मकी उक्त पंचिका कबकी और किसकी है ? संभवतः यह वही पंचिका है जिसको इन्द्रनन्दिने समन्तभद्रसे भी पूर्व तुम्बुलूराचार्यव्दारा सात हजार श्लोक प्रमाण विरचित कहा है। (देखो उपर पृ.४९)

किंतु जयधवलांमे एक स्थानपर स्पष्ट कहा गया है कि सत्कर्म महाधिकारमें कृति, वेदनादि चौवीस अनुयोगव्दार प्रतिबध्द है और उनमें उदय नामक अर्थाधिकार प्रकृति सहित स्थिती, अनुभाग और प्रदेशोंके अनुत्कृष्ट, उत्कृष्ट, जघन्य व अजघन्य उदयके प्ररूपणमें व्यापार करता है। यथा---

संतकम्ममहाहियारे कदि-वेदणादि-चउवीसमणियोगद्दारेसु पडिबद्धेसु उदओ णाम अत्थाहियारो ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसाणं पयडिसमण्णियाणमुक्कस्साणुक्कस्स-जहण्णाजहण्णुदयपरू वणेय वावारो। जयध. अ. ५१२.

इससे जाना जाता है कि कृति, वेदनादि चौवीस अनुयोगव्दारोंका ही समष्टिरूपसे सत्कर्म महाधिकार नाम है और चूकिं ये चौवीस अधिकार तीसरे अर्थात बंधस्वामित्वविचयके पश्चात क्रमसे वर्णन किये गये हैं, अतः उस समस्त विभाग अर्थात अन्तिम तीन खंडोका नाम **संतकम्म** या **सत्कर्मपाहुड** महाधिकार है।

किन्तु, जैसा आगे चलकर ज्ञात होगा, इन्हीं चौवीस अनुयोगव्दारोंसेजीवट्ठाणके थोडेसे भागको छोडकर शेष समस्त षट्खंडागमकी उत्पत्ति हुई है। अतः जयधवलाके उल्लेखपरसे इस समस्त ग्रंथ का नाम भी **सत्कर्म** महाधिकार सिद्ध होता है। इस अनुमानकी पुष्टि प्रस्तुत ग्रंथके दो उल्लेखोंसे अच्छी तरह हो जाती है। पृ. २१७ पर कषायपाहुड के और सत्कर्मपाहुडके उपदेशमें मतभेदका उल्लेख किया गया है। यथा--

'एसो **संतकम्म-पाहुड-**उवएसो। **कसायपाहुड-**उवएसो पुण...'

आगे चलकर पृष्ठ २२१ पर शंका की गई कि इनमेंसे एक वचन सूत्र और दूसरा असूत्र होना चाहिये और यह संभव भी है, क्योंकि, ये जिनेन्द्र वचन नहीं हैं किंतु आचार्योंके वचन है। इसका समाधान किया गया है कि नहीं, सत्कर्म और कषायपाहुड दोनों ही सूत्र है, क्योंकि, उनमें तीर्थंकरव्दारा कथित, गणधरद्वारा रचित तथा आचार्यपरंपरासे आगत अर्थका ही ग्रंथन किया गया है। यथा---

'आइरियकहियाणं **संतकम्म-कसाय-पाहुडाणं** कथं सुत्तत्तणमिदि चे ण .....(पृ. २२१)

यहां स्पष्टतः कषाय पाहुड के साथ सत्कर्मपाहुडसे प्रस्तुत समस्त षटखंडागमसे ही प्रयोजन हो सकता है और यह ठीक भी है, क्योंकि, पूर्वोकी रचनामें उक्त चौवीस अनुयोगद्वारोंका नाम **महाकर्मप्रकृतिपाहुड** है। उसीका धरसेन गुरू ने पुष्पदन्त भूतबलि द्वारा उध्दार कराया है, जैसा कि जीवट्ठाणके अन्त व खुध्दाबंधके आदिकी एक गाथासे प्रकट होता है।

जयउ **धरसेणणाहो** जेण **महाकम्मपयडिपाहुडसेलो** ।
बुध्दिसिरेणुध्दरिओ समप्पिओ पुप्फुयंतस्स।। (धवला अ. ४७५)

महाकर्मप्रकृति और सत्कर्म संज्ञाए एक ही अर्थकी द्योतक है। अतः सिध्द होता है कि इस समस्त **षट्खंडागमका** नाम **सत्कर्मप्राभृत** है। और चूंकि इसका बहुभाग धवला टीकामें ग्रथित है, अतःसमस्त **धवलाको** भी **सत्कर्मप्राभृत** कहना अनुचित नहीं। उसी प्रकार महाबंध या निबंधनादि अठारह अधिकार भी इसीके एक खंड होनेसे सत्कर्म कहे जा सकते है। और जिस प्रकार खंड विभागकी दृष्टिसे कृतिका वेदनाखंडमें स्पर्श, कर्म , प्रकृति तथा बंधनके प्रथम भेद बंधका वर्गणाखंडमें अन्तर्भाव कर लिया गया है, उसी प्रकार निबन्धनादि अठारह अधिकरोंका महाबंध नामक खंडमे अंतर्भात अनुमान किया जा सकता है जिससे महाधवलान्तर्गत उक्त पंचिकाके कथनकी सार्थकता सिध्द हो जाती है, क्योंकि , सत्कर्मका एक विभाग होनेसे वह भी सत्कर्म कहा जा सकता है।

सत्कर्मप्राभृत षट्खंडागम तथा उसकी टीका धवलाकी इस रचनाको देखनेसे ज्ञात होता है कि उसके मुख्यतः दो विभाग हैं। प्रथम विभागके अन्तर्गत जीवट्ठाण, खुद्दाबंध व बंधस्वामित्त्वविचय है। इनका मंगलाचरण, श्रुतावतार आदि एक ही बार जीवट्ठाणके आदिमें किया गया है और उन सबका विषय भी जीव या बंधककी मुख्यतासे है। **जीवट्ठाण**में गुणस्थान और मार्गणओंकी अपेक्षा सत्, संख्या आदि रूपसे जीवतत्वका विचार किया गया है। **खुद्दाबंध**में सामान्यकी अपेक्षा बंधक, और **बंधस्वामित्वविचय**में विशेषकी अपेक्षा बंधकका विवरण है।

दुसरे विभागके आदिमें पुनः मंगलाचरण व श्रुतावतार दिया गया है, और उसमे यथार्थतः कृति, वेदना आदि चौवीस अधिकारोंका क्रमशः वर्णन किया गया है और इस समस्त विभागमें प्रधानतासे कर्मोकी समस्त दशाओंका विवरण होनेसे उसकी विशेष संज्ञा सत्कर्मप्राभृत है। इन चौवीसोंमेंसे द्वितीय अधिकार **वेदना** का विस्तारसे वर्णन किये जानेके कारण उसे प्रधानता प्राप्त हो गई और उसके नामसे चौथा खंड खडा हो गया। बंधनके तीसरे भेद बंधनीयमें वर्गणाओंका विस्तारसे वर्णन आया और उसके महत्त्वके कारण **वर्गणा**

नामका पांचवॉ खंड हो गया। इसी बंधनके चौथे भेद बंधविधानके खूब विस्तारसे वर्णन किये जानेके कारण उसका **महाबंध** नामक छठवां खंड बन गया और शेष अठारह अधिकार उन्हीके आजूबाजूकी वस्तु रह गये।

धवलाकी रचनाके पश्चात उसके सबसे बडे पारगामी विद्वान नेमिचंद्र सिध्दान्तचक्रवर्तीने इन दो ही विभागोंको ध्यान में रखकर जीवकाण्ड और कर्मकाण्डकी रचना की, ऐसा प्रतीत होता है। तथा उसके छहों खंडोका ख्याल करके उन्होंने गर्वके साथ कहा है कि 'जिस प्रकार एक चक्रवर्ती अपने चक्रके द्वारा छह खंड पृथिवीको निर्विघ्नरूपसे अपने वशमें कर लेता है, उसी प्रकार अपने मतिरूपी चक्रद्वारा मैंने छह खंड सिध्दान्तका सम्यक् प्रकारसे साधन कर लिया----

जह चक्केण य चक्की **छक्खंडं** साहियं अपिग्घेण।
तह मइचक्केण मया **छक्खंडं** साहियं सम्मं ।। ३९७ ।। गो. क.

इससे आचार्य नेमिचंद्रको **सिद्धान्तचक्रवर्तीका** पद मिल गया और तभीसे उक्त पूरे सिद्धान्तके ज्ञाताको इस पदवीसे विभूषित करनेकी प्रथा चल पडी। जो इसके केवल प्रथम तीन खंडोमे पारंगत होते थे, उन्हें ही जान पडता है, **त्रैविद्यदेव**का पद दिया जाता था। श्रवणबेलगोलाके शिलालेखोंमें अनेक मुनियोंके नाम इन पदवियोंसे अलंकृत पाये जाते हैं। इन उपाधियोंने वीरसेनसे पूर्वकी सूत्राचार्य, उच्चारणाचार्य, व्याख्यानाचार्य, निक्षेपाचार्य और महावाचककी पदवियोंका सर्वथा स्थान ले लिया। किंतु थोडे ही कालमें गोम्मटसारने इन सिद्धान्तोंका भी स्थान ले लिया और उनका पठन-पाठन सर्वथा रूक गया। आज कई शताब्दियोंके पश्चात् इनके सुप्रचारका पुनःसुअवसर मिल रहा है।

षटखंडागमका व्दादशांगसे संबंध

दिगम्बर सम्प्रदायकी मान्यतानुसार षट्खंडागम और कषायप्राभृत ही ऐसे ग्रंथ हैं जिनका सीधा संम्बध महावीरस्वामीकी व्दादशांग वाणीसे माना जाता है। शेष सब श्रुतज्ञान इससे पूर्व ही क्रमशः लुप्त व छिन्न भिन्न हो गया। व्दादशांग श्रुतका प्रस्तुत ग्रंथमें विस्तारसे परिचय कराया गया है (पृ.९१ से)। इनमेंसे बारहवें अंगकोछोडकर शेष सब ही नामोंके अंग-ग्रंथ श्वेतांम्बर सम्प्रदायमें जब भी पाये जाते हैं। इन ग्रंथोकी परम्परा क्या है और उनका विषय विस्तारादि दिगम्बर मान्यताके कहांतक अनुकूल प्रतिकूल है इसका विवेचन आगेके किसी खंडमे किया जायगा, यहाँ केवल यह बात ज्ञान देनेके योग्य है कि जो ग्यारह अंग श्वेतांबर साहित्यमें हैं वे दिगम्बर साहित्यमें नही हैं और जिस बारहवें अंगका श्वेतांबर साहित्यमें सर्वथा अभाव है वही दृष्टिवाद नामक बारहवां अंग प्रस्तुत सिध्दान्त ग्रथोंका उद्गमस्थान है।

बारहवें दृष्टिवादके अन्तर्गत परिकर्म, सूत्र, प्रथमानुयोग, **पूर्वगत** और चूलिका ये पांच प्रभेद हैं। इनमेंसे पूर्वगतके चौदह भेदोमेंके व्दितीय आग्रायणीय पूर्वसे ही जीवट्ठाणका बहुभाग और शेष पांच खंड संपूर्ण निकले है जिनका क्रमभेद नीचेके **वंशवृक्षोंसे** स्पष्ट हो जायगा।

१. बारहवें अंग दृष्टिवादके चतुर्थ भेद पूर्वगतका व्दितीय भेद
आग्रायणीय पूर्व.

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२
पूर्वान्त अपरान्त ध्रुव अध्रुव चयनलब्धि अर्धोपम प्रणिधिकल्प अर्थ भौम व्रतादिक सर्वार्थ कल्पनिर्याण

१३ १४
अतित सिध्द-बध्द अनागत सिध्द-बध्द

२० पाहुड उनमें चतुर्थपाहुड कर्मप्रकृति

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २३ २४

कृति वेदना स्पर्श कर्म प्रकृति बंधन निबंधन प्रक्रम उपक्रम उदय मोक्ष संक्रम लेश्या लेश्याकर्म लेश्यापरिणाम सातासात दीर्घहस्य भवधारणीय पुद्गलात्म निधत्तानिधत्त निकाचितानिकाचित कर्मस्थिति पश्चिमस्कंध अल्पबहुत्व

वेदना बंध बंधनीय बंधक
बंधविधान
खंड ४

वर्गणा खुद्दाबंध महाबंध
खंड५ खंड २ खंड ६

इस वंशवृक्षसे स्पष्ट है कि आग्रायणीय पूर्वके चयनलब्धि अधिकारके चतुर्थ भेद कर्म प्रकृति पाहुड के चौवीस अनुयोगव्दारोंसे ही चार खंड निष्पन्न हुए हैं। इन्हीके बंधन अनुयोगव्दार के एकभेद बंधविधानसे जीवट्ठाणका बहुभाग और तीसरा खंड बंधस्वामित्वविचय किस प्रकार निकले यह आगेके वंश वृक्षोसे स्पष्ट हो जायेगा।

बंधकके ११ अनुयोगव्दारोंमे पांचवा द्रव्यप्रमाणानुगम है। वही जीवट्ठाणकी **संख्या प्ररू पणाका उद्गमस्थान है।**

२ बंधविधान

प्रकृति१ स्थिति २ अनुभाग ४ प्रदेश ४

मूल उत्तर

एकैकोत्तर अव्वोगाढ

समुत्कीर्तना सर्वबंध नोसर्ब उत्कृष्ट अनुत्कृष्ट जघन्य अजघन्य सादि अनादि ध्रुव अध्रुव
बंधस्वामित्व वि. बंधकाल बंधान्तर बंधसन्निकर्ष भंगविचय भागाभाग परिमाण क्षेत्र स्पर्शन काल अन्तर **भाव** अल्पबहुत्व
१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ **१२** १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ **२३** २४

बंधस्वामित्वविचय खंड ३

प्रकृति१ स्थिती २ दंडक ३ दंडक २ दंडक ३

जीवट्ठाणकी पांच चूलिकाएं
अव्वोगढ

भुजागर प्रकृतिस्थान

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८
सत संख्या क्षेत्र स्पर्शन काल अंन्तर भाव अल्पबहुत्व

जीवट्ठाणके छह अनुयोगव्दार

३ बंधविधान

प्रकुति स्थिती अनुभाग प्रवेश

मूल उत्तर

अर्धच्छेद सर्व नोसर्व उत्कृष्ट अनुत्कृष्ट जघन्य अजघन्य सादि अनादि ध्रुव अध्रुव स्वामित्व काल अन्तर संनिकर्ष भंग

विचय भागाभाग परिमाण क्षेत्र सर्शन काल अन्तर भाव अल्पबहुत्व

जघन्य उत्कृष्ट

जघन्यस्थिती उत्कृष्टस्थिती
चूलिका६ चूलिका ७

४ दृष्टिवाद (१२ वा अंग)

परिकर्म सूत्र प्रथमानुयोग पूर्वगत चूलिका

सम्यकत्वोत्पत्ति
चूलिका

५ व्याख्याप्रज्ञप्ति (पांचवां अंग)

गति अगति
चूलिका ९

इन वंश-वृक्षोंसे षट्खंडागमका द्वादशांगश्रुतसे सम्बन्ध स्पष्ट हो जाता है और साथ ही साथ उस व्दादशांग वाणीके साहित्यके विस्तारका भी कुछ अनुमान किया जा सकता है।